पाठशाला भीतर और बाहर
पाठकों के विचार

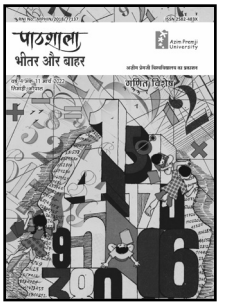

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पत्रिका *पाठशाला भीतर और बाहर* का ग्यारहवाँ अंक प्राप्त हुआ। हमेशा की तरह तुरन्त ही इसके पन्ने पलटने शुरू कर दिए। यह अंक मेरे लिए इसलिए भी महत्त्वपूर्ण था क्योंकि गणित विषय मेरी रुचि और शिक्षण दोनों में हमेशा से रहा है। इस अंक में छपे अधिकतर लेख स्कूली स्तर के गणित शिक्षण की हमारी दृष्टि से प्रासंगिक हैं। मुझे मीनू पालीवाल का लेख 'मैडम, मेरा जवाब सही है!' बहुत ही उपयोगी लगा। उन्होंने कक्षा शिक्षण की प्रक्रिया को जिन चार उदाहरणों के माध्यम से समझाया है वह सराहनीय और वास्तविक हैं। हम बड़े बच्चों पर सिर्फ़ अपने विचार थोपने पर विश्वास करते हैं और बच्चों को सोचने व तर्क करने के अवसर नहीं देते हैं। इससे बच्चों की सीखने-सिखाने में सक्रियता कम होती चली जाती है और आत्म-विश्वास के अभाव में वे कक्षा शिक्षण में प्रतिभागिता करना बन्द कर देते हैं। मैं लेख में कक्षा शिक्षण के उदाहरणों से यह समझी हूँ कि शिक्षकों को बच्चों के प्रश्नों को पूरा सम्मान देना चाहिए और उनके प्रश्नों की दुविधा को कुछ हद तक शिक्षण सहायक सामग्री के द्वारा दूर करना चाहिए। बच्चे अगर प्रश्न करने लग जाएँ तो शायद उत्तर ढूँढ़ने में भी उनको कोई कठिनाई नहीं होगी और वे रटे-रटाए उत्तर देने की बजाय समझकर अपने तर्कपूर्ण उत्तर देने में सक्षम हो सकते हैं।

इस तरह के लेख प्रकाशित कर हम शिक्षकों को सीखने के अवसर उपलब्ध कराने के लिए *पाठशाला* टीम का शुक्रिया।

इन्दु पंवार, प्रधान अध्यापिका, राजकीय प्राथमिक विद्यालय गिरगाँव, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

पाठशाला के ग्यारहवें अंक में छपा लेख 'मैडम, मेरा जवाब सही है!' वर्तमान शिक्षण परिस्थितियों के साथ बहुत प्रासंगिक है। लेख में मीनू पालीवाल ने अपने विद्यालयी अनुभवों को चार उदाहरणों के माध्यम से रखने का प्रयास किया है। जैसा कि नाम से ही समझ आता है कि लेख छात्रों के कुछ ऐसे जवाबों की तरफ़ इशारा करता है, जो हो सकता है शिक्षक की दृष्टि से ग़लत हों। किन्तु एक छात्र जो अभी अपने आसपास के वातावरण से अनुभव प्राप्त कर रहा है, उसके अनुभवों के आधार पर हो सकता है उसके अनुसार जवाब सही हों। अकसर ऐसा देखा जाता है कि एक सार्थक और आदर्श उत्तर की तलाश में शिक्षक छात्रों के अनुभव-आधारित उत्तरों को दरकिनार कर देते हैं, जबकि ऐसे सभी उत्तर एक समावेशी कक्षा के लिए बहुमूल्य सम्पदा का कार्य कर सकते हैं। लेखिका के इस लेख को पढ़ते वक़्त मुझे अपने बचपन की एक घटना स्मरण हुई जो इसी दिशा में इशारा करती है कि कैसे छात्रों के अनुभव-आधारित प्रश्न शिक्षक की दृष्टि में ग़लत हो जाते हैं।

एक शिक्षक या शिक्षाकर्मी के रूप में हमें छात्रों और उनके द्वारा दिए गए जवाबों के पीछे का कारण ज़रूर जानना चाहिए। सम्भव है कि छात्र के अनुभव अभी उस स्तर पर न हो पाए हों जिस

स्तर की अपेक्षा हम छात्र से रख रहे हैं। यह लेख हम सभी के बचपन की कई यादों को ताज़ा करने वाला है।

अनुराग तिवारी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, कोटद्वार, पौड़ी, श्रीनगर, उत्तराखंड

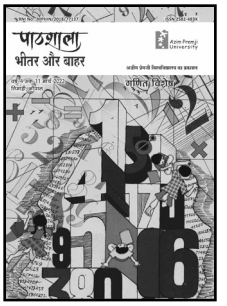

गणित को कठिन विषय माना जाता है परन्तु *पाठशाला* पढ़ने के बाद प्रतीत हुआ कि कैसे हम बड़े और बच्चे भी गणित का उपयोग दैनिक जीवन में करने लग जाते हैं। *पाठशाला* के ग्यारहवें अंक में प्रकशित रुबीना खान और महेश झरबड़े द्वारा लिखित पहला आलेख 'जीवन में गणित' बताता है कि किस तरह बच्चे अपने दैनिक जीवन में गणित का उपयोग छोटे-छोटे कार्यों में करने लगते हैं। इसमें रुपए-पैसे मुख्य भूमिका में रहते हैं। हालाँकि वे उसे लिखने में इतने सक्षम नहीं होते हैं परन्तु गणित की विभिन्न संक्रियाओं, संख्या ज्ञान, अनुमान, परिकल्पना, नापना, वर्गीकरण, उपयोग, आदि में अच्छे से पारंगत होने लगते हैं।

सन्दर्भित आलेख में दी गई गतिविधियाँ, चर्चाएँ, दिनचर्या, आदि इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

पेड़ काटा तो कहाँ गिरेगा, कितनी दूरी लेगा, पौधा लगाने के लिए कितना बड़ा गड्ढा, पेड़ की ऊँचाई, कितनी बड़ी रस्सी, कितने लोग, तो कितने दोने या गिलास, सब्ज़ी काटना, बड़ी या छोटी चादर का इस्तेमाल, आदि ऐसे कई उदाहरण लेख में दिए गए हैं जिनसे हम यह समझ सकते हैं कि यह बच्चों के गणितीय विकास में कितना महत्त्वपूर्ण रोल अदा करता है।

मगर इस आलेख को पढ़कर मुझे यह भी समझ आया कि यह ज़रूरी है कि गणित की पुस्तकों में भी ऐसे उदाहरणों के साथ कार्य हो ताकि बच्चे उसे जटिल या बोझिल न मानते हुए सरल तरीक़े से अपना सकें एवं पढ़ाई में सुगमता, सरलता व सहजता महसूस कर पाएँ।

ऋतु रानी शर्मा, प्रधानाध्यापक, राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, टीबा श्योपुर, सांगानेर, जयपुर, राजस्थान

तान्या सक्सेना का आलेख 'प्राथमिक स्तर से गणितीय सोच का विकास' पढ़कर लगा कि वास्तव में हमें प्राथमिक स्तर से ही बच्चों को परिवेश के साथ गणित से जोड़ना प्रारम्भ कर देना चाहिए और कक्षा में गणितीय तर्क क्षमता का विकास करना चाहिए।

इसी प्रकार सत्य नारायण का लेख 'उत्तर खोजना बनाम प्रश्न बनाना' मुझे काफ़ी महत्त्वपूर्ण लगा। लेखक का कविता या कहानी के द्वारा बच्चों में घुल-मिल जाना और बच्चों को चार लाइनें सुनाकर उनसे ही प्रश्न बनवाना बहुत ही कारगर तरीक़ा है बच्चों की सोच को विकसित करने का। यही बाल-केन्द्रित शिक्षा है। इसे मैं अपनी कक्षा में क्रियान्वित करना चाहूँगी।

शिक्षक लालाराम विश्वकर्मा का साक्षात्कार काफ़ी प्रेरणादायक है। एक शिक्षक के रूप में इनकी जीवन यात्रा को पढ़कर पता चला कि वे एक कर्मठ, अपने कार्यों के प्रति समर्पित, नवाचारों का सृजन करने वाले, सामाजिक, आसपास के परिवेश को प्रयोगशाला मानने और बनाने वाले भी एवं बाल शोध करने वाले एक कर्मयोगी शिक्षक हैं।

पाठशाला की 'संवाद' शृंखला में 'गणित में भाषा, संवाद और शिक्षक व विद्यार्थी के बीच बातचीत का महत्त्व' को पढ़कर काफ़ी सीखने-समझने को मिला। गणित में भाषा शिक्षण और शिक्षक का विद्यार्थी के साथ संवाद, सीखने-सिखाने की प्रक्रिया के लिए कितना आवश्यक है, इसकी समझ मज़बूत हुई।

सुमन जैन, अध्यापिका, राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, ग्वार ब्राह्मणान, सांगानेर, जयपुर, राजस्थान

पाठशाला के 11वें अंक में वैसे तो सभी लेख रुचिकर और महत्त्वपूर्ण लगे, परन्तु हृदयकान्त दीवानजी का लेख 'गणित क्यों और कैसे' ने मेरा ध्यान आकर्षित किया, क्योंकि अकसर मैं भी स्वयं से यही प्रश्न पूछती हूँ कि गणित से डर क्यों लगता है। लेख में लिखी बात बिलकुल सत्य है कि कक्षा-कक्ष में जिस तरह से गणित पढ़ाया जाता है और समाज द्वारा शुरुआत से ही हमारे मन-मस्तिष्क में यह भर दिया जाता है कि गणित विषय बहुत मुश्किल है। हृदयकान्तजी ने जिस प्रकार गणित सीखने को संगीत सीखने जैसा बताया है, वह बहुत रुचिकर लगा। गणित को हौवा न बनाकर बच्चे के जीवन से जोड़कर एक खोजबीन का विषय बनाया जाए और कुछ रोचक कार्य करके उसमें लगातार परिवर्तन करके देखते रहना और अपने जीवन में ढूँढ़ते रहना जहाँ वह स्कूल में सिखाए गए गणित को प्रयोग कर सके। शुरुआत से ही हम बच्चे को मूर्त से अमूर्त उदाहरणों में उलझाकर उसकी क्षमता को कम कर रहे होते हैं। जहाँ एक समय बच्चे को महसूस होने लगता है कि वह कुछ नहीं जानता है जबकि गणित के ऑब्जेक्ट वस्तुतः अमूर्त हैं। हमें बच्चे को अमूर्तता की ओर ले जाना है। गणित का अर्थ अवधारणाओं को समझना व उनमें सक्षमता हासिल करना है न कि ज्ञात बातों को याद रखना क्योंकि अकसर मॉडल या मूर्त चीज़ों के इस्तेमाल से हम बच्चे की क्षमता को, समझ को कम आँक कर उसे पीछे धकेलने का प्रयास करते हैं। बच्चा स्वयं प्रयास करे, यही सबसे महत्त्वपूर्ण है। इस लेख से गणित सीखने की प्रक्रिया को समझना काफ़ी आसान रहा।

कल्पना असवाल, सहायक अध्यापिका, रा आ उ प्रा वि लाटा, भटवाड़ी, उत्तरकाशी, उत्तराखंड

अशोक प्रसाद का लिखा लेख 'सन्दर्भों में निहित गणितीय सम्भावनाएँ' परिवेश में मौजूद सन्दर्भ और उनपर उपयुक्त बातचीत के गणित सीखने में महत्त्व पर केन्द्रित है।

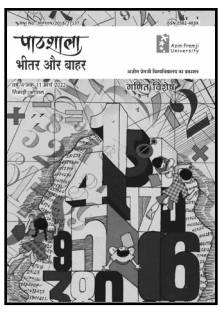

लेख में बताया गया है कि गणित की अमूर्त अवधारणाओं को सन्दर्भों से जोड़कर और इनसे जुड़े प्रश्नों पर उपयुक्त बातचीत कर कैसे बच्चे चरणबद्ध तरीक़े से अपनी समझ बनाते हैं। लेख में छह साल की अपूर्वी से प्रश्न पूछा गया कि एक बाल्टी 8 मग से भर जाती है, एक मग 3 गिलास से भर जाता है तो बाल्टी कितने गिलास से भरेगी? अपूर्वी प्रश्न पर विचार करती है लेकिन कुछ समझ नहीं पाती, इसलिए वह प्रश्न को हल करने से साफ़ मना कर देती है। लेखक प्रश्न पर पुनः विचार करता है। वह प्रश्न की प्रकृति व प्रश्न में दी जानकारी के बीच सम्बन्धों को ढूँढ़ता है। शायद वह यह समझना चाहता है कि बच्ची को सवाल समझ में क्यों नहीं आया। वह दोबारा अपूर्वी से प्रश्न पूछता है और अबकी बार क्यों, कैसे और क्या जैसे सवालों से बातचीत की शुरुआत करता है। इस बार वह बातचीत में रुचि लेती है और जवाब ढूँढ़ने के लिए चिन्तन-मनन करने लगती है। वह प्रश्न को हल करने के लिए स्वयं के तरीक़े ढूँढ़ने लगती है, यहाँ तक कि प्रश्न में दी गई जानकारी को संकेतों से निरूपित कर उनके बीच तार्किक सम्बन्धों को स्थापित करने लगती है और अन्ततः प्रश्न का जवाब ढूँढ़ लेती है और उसकी व्याख्या भी करती है। लेखक आगे प्रश्नों की कठिनता का स्तर बढ़ाते हुए अन्य प्रश्नों पर भी अपूर्वी से चर्चा करता है।

नरेश पंवार, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, पौड़ी, श्रीनगर, उत्तराखंड

सत्य नारायण द्वारा लिखित लेख 'उत्तर खोजना बनाम प्रश्न बनाना' बच्चों को ख़ुद से प्रश्न खोजने और प्रश्न निर्माण के मौक़े देने पर ज़ोर देता है। यह लेख उस परम्परा को भी इंगित करता है जहाँ पर हम वर्षों से चली आ रही प्रक्रिया को पोषित करते हैं, और इस परम्परा में पारंगत प्रत्येक व्यक्ति को विशेष होशियार समझने लगते हैं। हमारे स्कूल की परम्परा व शिक्षण प्रक्रियाओं में इसके उदाहरण

बख़ूबी देखने को मिलते हैं। यह परम्परा हमारे जीवन में इस प्रकार से घर कर गई है कि हमारे व्यक्तित्व, पठन-पाठन का मूल्यांकन भी इसी से किया जाता है, और वह परम्परा है 'उत्तर देना'।...

उत्तर देने वाले बच्चे, व्यक्ति, इंसान को होशियार समझा जाता है, किन्तु हम अपनी प्रक्रियाओं में इतने व्यस्त हो जाते हैं और भूल जाते हैं कि उत्तर देने से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है प्रश्न बनाना और प्रश्न पूछना।... उत्तर देना ज़्यादातर रटने की प्रक्रिया को बढ़ावा देता है जबकि प्रश्न पूछने में तार्किकता, विश्लेषण, अवलोकन, आदि सम्मिलित होता है। यह प्रक्रिया बच्चे को कुछ नया रचने का मौक़ा देती है और सृजनात्मकता के अवसर उपलब्ध करवाती है। यदि यह प्रक्रिया इतनी महत्त्वपूर्ण है तो इसपर ध्यान क्यों नहीं दिया जाता है? हमारी स्कूली परम्परा के केन्द्र व आकलन प्रक्रिया में उत्तर देना ही क्यों महत्त्वपूर्ण समझा जाता है? इन्हीं सब बातों, सवालों को खोजने व सोचने के मौक़े यह लेख देता है।

इसमें लेखक द्वारा बच्चों के साथ शुरुआत में सहज माहौल बनाया गया, कुछ कविताएँ-कहानियाँ सुनाई गईं, उनके साथ सहज होकर पहले स्वयं सवालों को बनाने की पहल की गई और उसके बाद बच्चों को प्रोत्साहित किया गया। शुरुआत में तो इस प्रक्रिया में काफ़ी चुनौतियाँ आईं किन्तु धीरे-धीरे बच्चे प्रश्न बनाने में पारंगत हो गए। अत: यह लेख उत्तर खोजने के साथ-साथ प्रश्न बनाने पर अधिक ज़ोर देता है।

मीमांशा गोदियाल, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

हृदयकान्त दीवान द्वारा लिखित 11वें अंक का लेख 'गणित क्यों और कैसे' मुझे अपने काम के लिए उपयुक्त लगा।

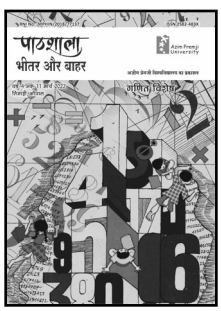

इसे पढ़ने से पहले गणित विषय को मैं संख्या ज्ञान से ज़्यादा कुछ नहीं समझता था, या यूँ कहें बहुत संकीर्ण अर्थों में ही जानता था। परन्तु इस लेख ने गणित के व्यापक अर्थों को समझने में मेरी मदद की। इस लेख में लेखक ने 'गागर में सागर' भर दिया है। इतना सहज, सरल और स्पष्ट लेख, वह भी गणित विषय का, आज से पहले मैंने नहीं पढ़ा था। बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान पर प्रशिक्षण के दौरान जितने सवाल मेरे मन में उठे, उन सबके जवाब उदाहरण सहित मुझे इस लेख में मिले। प्रस्तुत लेख गणित को सोचने, समझने, तर्क, चिन्तन और हमारे विश्लेषण के कौशल को विकसित करने के तौर पर समझाता है। इसने मेरी इस समझ को विस्तार दिया कि गणित केवल किताब में ही नहीं होता, वरन् यह हमारे परिवेश और हमारी दिनचर्या का अभिन्न हिस्सा है। यहाँ तक कि जो बच्चे अभी स्कूल नहीं आए हैं, वह भी अपनी दिनचर्या में गणितीय सोच और कौशलों का इस्तेमाल करते हैं। इसे हर शिक्षक को ज़रूर पढ़ना चाहिए और अपने अभी तक के काम को इस लेख के आलोक में पुनर्विचार कर गणित के शिक्षण पर काम करना शुरू करना चाहिए।

ओमप्रकाश विश्वकर्मा, प्रभारी प्रधानाध्यापक, शासकीय प्राथमिक शाला करईया गूजर, खुरई, सागर, म.प्र.

मीनू पालीवाल का आलेख 'मैडम, मेरा जवाब सही है!' पढ़कर मेरा नज़रिया एक शिक्षक होने के नाते बदला है। इसे पढ़कर समझ आया कि सवाल पूछना सीखने-सिखाने और ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया का स्वाभाविक व अहम हिस्सा है। कक्षा में इसकी जगह होनी ही चाहिए। हमें बच्चों की जिज्ञासाओं के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है। बच्चे जब अपने ही पूर्व ज्ञान के आधार पर एक दूसरे को उत्तर देते हैं या हमारे प्रश्न का उत्तर देते हैं तो हमें उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए।

बच्चे अगर प्रक्रिया के तहत सवाल पूछते हैं, विषयवस्तु पर अपनी समझ बनाते हैं, निर्णय देते हैं, पैमाने की बात करते हैं तो यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि बच्चों की उनके कार्यों में मदद की जाए। प्रश्न पूछने के कौशल को विकसित करने के लिए शिक्षण के दौरान आवश्यक गतिविधियाँ अपनाई जानी चाहिए। *पाठशाला* में प्रकाशित इस लेख ने मुझे बहुत प्रभावित किया।

जिस तरह से यह गणित विशेषांक निकाला गया है, मेरा निवेदन है कि अन्य विषयों से सम्बन्धित विशेषांक भी निकाले जाएँ।

विष्णु कुमार, प्रधानाध्यापक, राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, दहलावास, जयपुर, राजस्थान

रुबीना खान और महेश झरबड़े के लेख 'जीवन में गणित' में की गई चर्चा यक़ीनन ग्रामीण जीवन और मेहनतकश मज़दूर भाई-बहनों की गणितीय समझ के प्रति हम सबको नई दृष्टि देती है।

प्रकाश चन्द्र गौतम, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, बलौदा बाजार, छत्तीसगढ़

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, भोपाल

द्वारा आयोजित संगोष्ठी

विद्यालयी शिक्षा में कला व शारीरिक शिक्षा : आवश्यकता, वर्तमान परिस्थितियाँ, सम्भावनाएँ व चुनौतियाँ

में भाग लेने के लिए आप सभी आमंत्रित हैं।

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय 2017 से देश के अलग-अलग विश्वविद्यालयों के साथ मिलकर विद्यालयी शिक्षा से सम्बन्धित विषयों पर 'शिक्षा के सरोकार' शृंखला के अन्तर्गत भारतीय भाषाओं में संगोष्ठी का आयोजन करता रहा है। इस क्रम में अब तक हिन्दी, कन्नड़ और पंजाबी भाषाओं में विभिन्न मुद्दों पर संगोष्ठियाँ आयोजित की गई हैं।

इसी शृंखला की उक्त संगोष्ठी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, भोपाल के कान्हासैय्या में नवनिर्मित परिसर में दिसम्बर, 2022 / जनवरी, 2023 में प्रस्तावित है।

संगोष्ठी का परिप्रेक्ष्य

कला शिक्षा व शारीरिक शिक्षा को हमेशा से ही शिक्षा का महत्त्वपूर्ण हिस्सा माना जाता रहा है। नीति एवं वैचारिक दस्तावेज़ों में भी रेखांकित किया जाता रहा है कि खेल व कला के सभी पहलू, बौद्धिक विकास एवं औपचारिक विषयों की अवधारणाओं की समझ के विकास में महती भूमिका अदा करते हैं। यह भी कि समाजीकरण की प्रक्रिया एवं भावनात्मक और संवेदनात्मक विकास में भी कला व खेलकूद की अहम भूमिका है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ) 2005 और कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच पर पोजीशन पेपर, दोनों ही दस्तावेज़, कला व कला-एकीकृत शिक्षा की वकालत करते हैं। ये दोनों दस्तावेज़ संगीत, नृत्य, दृश्य कला और थिएटर को एक अनिवार्य हिस्से (दसवीं कक्षा तक) के रूप में स्कूल पाठ्यक्रम में शामिल करने पर ज़ोर देते हैं। इसी तरह, शिक्षा में खेलों को एकीकृत करने की हिमायत करते हुए राष्ट्रीय खेल नीति 2001 खेलों एवं शारीरिक शिक्षा को शैक्षिक पाठ्यक्रम के साथ मिलाने तथा इसे सेकेण्डरी स्कूल तक शिक्षा का अनिवार्य हिस्सा बनाने और इसे विद्यार्थी की मूल्यांकन पद्धति में सम्मिलित करने की प्रतिबद्धता को दर्शाती है। नई शिक्षा नीति 2020 ने भी इसे अपनी वैचारिक समझ का प्रमुख हिस्सा माना है, और इसके महत्त्व को स्वीकार करते हुए यह नीति शिक्षा में भारतीय कलाओं, खेलकूद और संस्कृति को बढ़ावा देने पर ज़ोर देती है।

शारीरिक शिक्षा, खेलकूद व कला शिक्षा की स्कूल में जगह पर मंथन एवं संवाद की महती आवश्यकता है। यह समझने व विचार करने की आवश्यकता है कि यह क्यों महत्त्वपूर्ण है, नीति दस्तावेज़ इनके बारे में क्या कहते हैं, स्कूलों व शिक्षा व्यवस्था के अन्य हिस्सों में इसका क्या स्थान है व आज इसकी स्थिति क्या है, इन्हें शामिल करने के लिए किस-किस तरह के व्यवस्थित अथवा प्रयोगात्मक छोटे-छोटे प्रयास हुए हैं, इन सबके क्या अनुभव रहे हैं व इनके आलोक में आगे बढ़ने का क्या रास्ता हो सकता है और इनके ज़्यादा गम्भीरता से शामिल होने में प्रमुख अड़चनें किस प्रकार की हैं (आर्थिक हैं, व्यवस्थागत हैं, सामाजिक हैं, सांस्कृतिक हैं आदि-आदि)।

यह संगोष्ठी इन सभी मसलों के इर्द-गिर्द संवाद को बढ़ावा देने के लिए है। इस सन्दर्भ में कुछ उपविषय इस तरह हो सकते हैं :

अ. स्कूली शिक्षा में कला / सौन्दर्यशास्त्र के आयामों की मौजूदगी... क्यों ?

1. स्कूलों में खेल व कला शिक्षा : दस्तावेज़ों में उनके प्रति दृष्टिकोण व उसका विकास / कला और खेल शिक्षा– परिप्रेक्ष्य
2. इंसान के विकास और गहराई से सीखने में कला और खेल शिक्षा का योगदान
3. ज्ञान के एक हिस्से के रूप में कला और खेलकूद व शारीरिक शिक्षा
4. कला शिक्षा और खेल शिक्षा के सन्दर्भ में हुए प्रयोग
5. कला शिक्षा और खेल शिक्षा की मौजूदा स्थिति व सम्भावनाएँ
6. कला शिक्षा और खेलकूद : जेंडर, विशेष क्षमता वाले बच्चे, सभी की भागीदारी

आ. पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक स्तर पर कला और खेल शिक्षा

1. सभी विद्यार्थियों में शिक्षा के प्रति दिलचस्पी पैदा करने और उनके लिए शिक्षा को अर्थपूर्ण बनाने में इनकी भूमिका
2. पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक स्तर के लिए कला व खेल शिक्षा का दृष्टिकोण व स्वरूप
3. विषयों की चारदीवारी और कला शिक्षा व खेलकूद

इ. उच्च प्राथमिक और माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में कला और खेल

1. कला और खेल का अन्य विषयों के साथ समेकन/अन्तरसम्बन्ध : नवाचार, प्रतिफल, चुनौतियाँ और सम्भावनाएँ
   (अ) इस स्तर पर विषयों के शिक्षण में कला की जगह
   (ब) कला व खेलों और विषय शिक्षण से इनका जुड़ाव
2. कला और खेलकूद शिक्षण के लिए पाठ्यक्रम निर्धारण : मौजूदा स्थिति, चुनौतियाँ और सम्भावनाएँ
3. माध्यमिक स्तर के लिए कला व खेल शिक्षा का दृष्टिकोण व स्वरूप

ई. शिक्षक प्रशिक्षण : वर्तमान स्थिति, चुनौतियाँ, सम्भावनाएँ

1. कला शिक्षा व खेलकूद : शिक्षकों की तैयारी
2. सामान्य शिक्षा महाविद्यालयों में कला और खेल के लिए तैयारी की सम्भावनाओं का विश्लेषण
3. कला शिक्षा और खेलकूद : स्कूलों की तैयारी

संगोष्ठी में भाग लेने की प्रक्रिया

संगोष्ठी हिन्दी में होगी। प्रस्तुत किए जाने वाले आलेख हिन्दी भाषा में ही अपेक्षित हैं। संगोष्ठी में इनका प्रस्तुतिकरण और उन पर चर्चा भी हिन्दी में ही होगी।

संगोष्ठी में भाग लेने के लिए आपको अपने प्रस्तावित पर्चे / शोध आलेख का एक 'एब्स्ट्रैक्ट' भेजना होगा। यहाँ 'एब्स्ट्रैक्ट' से आशय है कि आपके पर्चे / शोध आलेख का विषय क्या होगा? पर्चे का ढाँचा क्या होगा, दूसरे शब्दों में जो भी विचार आप लेख में प्रस्तुत करना चाहेंगे वे विचार क्या होंगे और मोटेतौर पर वे किस तरह से व्यवस्थित होंगे। यदि आप उक्त में से किसी चयनित विषय या उससे सम्बन्धित विषय पर बच्चों के साथ या शिक्षकों के साथ काम करेंगे तो संक्षिप्त में यह भी बताएँ कि क्या काम करेंगे और इसकी प्रक्रिया क्या होगी। इसके साथ ही 'एब्स्ट्रैक्ट' में आप जिन सम्भावित दस्तावेज़ों, पुस्तकों, पाठ्यपुस्तकों को सन्दर्भित करना चाहेंगे, उनका ज़िक्र भी करें।

आप अपने प्रस्तावित पर्चे का 'एब्स्ट्रैक्ट' 15 जुलाई, 2022 तक भेज सकते हैं। 'एब्स्ट्रैक्ट' 500 से 800 शब्दों तक का हो सकता है। कृपया 'एब्स्ट्रैक्ट' के अन्त में अपना संक्षिप्त परिचय, ई-मेल, डाक का पता तथा फ़ोन नम्बर का उल्लेख अवश्य करें। जहाँ तक सम्भव हो 'एब्स्ट्रैक्ट' वर्ड फ़ाइल में यूनीकोड में भेजें। साथ ही इस फ़ाइल की एक पीडीएफ भी भेजें।

अपने 'एब्स्ट्रैक्ट' seminar.artssportseducation@gmail.com पर भेजें।

'एब्स्ट्रैक्ट' संगोष्ठी की अकादमिक समिति द्वारा देखे जाएँगे। जिन 'एब्स्ट्रैक्ट' पर आगे काम किए जाने की सम्भावना होगी वे टिप्पणियों और सुझावों के साथ सम्बन्धित लेखकों से ई-मेल के ज़रिए साझा किए जाएँगे। 'एब्स्ट्रैक्ट' स्वीकृत होने के बाद आप पूर्ण आलेख लिखना आरम्भ कर सकते हैं। पूर्ण आलेख भी उक्त ई-मेल पते पर ही भेजा जाना है और अधिक जानकारी के लिए भी आप ऊपर दिए गए ई-मेल पर लिख सकते हैं।

मुद्रक तथा प्रकाशक मनोज पी. द्वारा अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डेवलपमेंट के लिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, प्लॉट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसाइटी, E-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा भोपाल, मध्यप्रदेश 462039 की ओर से प्रकाशित एवं गणेश ग्राफ़िक्स, 26-बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स, एम.पी. नगर, जोन-1 भोपाल द्वारा मुद्रित।

सम्पादक : गुरबचन सिंह